लोक सभा

बृहस्पति, ७ अगस्त १९५२

सदन की बैठक ९ बजे समवेत हुई

[उपाध्यक्ष महोदय अध्यक्ष-पद पर आसीन थे]

प्रश्न और उत्तर

(देखिये भाग १)

९-२२ म० पू०

काश्मीर राज्य के सम्बन्ध में प्रस्ताव

उपाध्यक्ष महोदय : माननीय प्रधान मंत्री औपचारिक रूप से प्रस्ताव प्रस्तुत करें।

प्रधान मंत्री तथा वैदेशिक-कार्य मंत्री (श्री जवाहरलाल नेहरू) : मैं प्रस्ताव करता हूं कि :

"That the statement made by the Prime Minister on the 24th July 1952 in regard to Jammu and Kashmir State, be taken into consideration."

"जम्मू तथा काश्मीर राज्य के सम्बन्ध में २४ जुलाई, १९५२ को प्रधान मंत्री द्वारा दिये गये वक्तव्य पर विचार किया जाय।"

सदन को स्मरण होगा कि कुछ दिन पहले मैं ने जम्मू तथा काश्मीर राज्य के कार्यों के सम्बन्ध में यहां सदन में एक लम्बा वक्तव्य दिया था। मैं उन्हीं बातों को दोहरा कर सदन को उकताना नहीं चाहता, किन्तु उस समस्या के सम्बन्ध में कई एक बातों पर प्रकाश डालना चाहता हूं और उन का महत्व समझाना चाहता हूं।

विगत पांच वर्षों से यह समस्या हमें अपनी पकड़ में रखती रही है और भारत सरकार को इस के कारण एक भारी बोझ उठाना पड़ रहा है। इस का बोझ इस लिये बहुत भारी रहा क्यों कि यह समस्या बहुत ही पेचीदा थी और हमारे 'हां' या 'नहीं' से सुलझ नहीं सकती थी। इस में अन्य बातें भी शामिल थीं। इस संसार में बहुत सी ऐसी बातें हैं जिन्हें हम स्वेच्छा से ही घटित होना देखना चाहते हैं, किन्तु हम अपनी इच्छा से उन सांसारिक घटनाओं का रूप बदल नहीं सकते। सदन को विदित है कि हम संसार के एक दुखान्त नाटक की भूमिका के समक्ष दर्शक बन कर खड़े हैं—हां, 'हम' से मेरा अभिप्राय संसार के सभी जीवों से है सदन के सदस्यों से ही नहीं—और इस प्रयत्न में हैं कि वह भूमिका जो दुर्घटना के रूप में बदलने वाली है, किसी तरह टल जाये और संसार में शान्ति की स्थापना हो। किन्तु कोई भी व्यक्ति इन घटनाओं को काबू में नहीं रख सकता। मनुष्य इन घटनाओं को कोई रूप देना चाहता है, उन में कुछ परिवर्तन करना चाहता है, उन की थोड़ा सा बलदना चाहता है किन्तु भावना

[श्री जवाहरलाल नेहरु]

और द्वेष की विभिन्न शक्तियों के संघर्ष का क्या परिणाम होगा, यह कोई भी नहीं जान सकता । संसार के इसी चित्रपट पर हम पांच वर्ष से अधिक समय तक काम करते रहे हैं । और अब आप जम्मू तथा काश्मीर राज्य, और उस के साथ सारे भारत का दुर्भाग्य समझ लीजिये कि इस राज्य की समस्या, चाहे कितनी ही छोटी हो, संसार के भारी चित्रपट का एक अंग बन चुकी है । यही कारण है कि हमारे रास्ते की कठिनाइयां बहुत ही अधिक परिमाण में बढ़ती चली गई हैं । अब यह समस्या हमारी ही समस्या न रह कर एक अन्तर्राष्ट्रीय समस्या बन चुकी है । किसी भी स्थिति में, यह समस्या अन्तर्राष्ट्रीय समस्या बन जाती यदि भारत के अतिरिक्त और कोई राष्ट्र इस में शामिल हो जाता और चूंकि ऐसी बात हो भी चुकी है, अतः यह अन्तर्राष्ट्रीय समस्या का रूप ले चुकी है । और चूंकि बहुत से अन्य देशों ने इस समस्या में दिलचस्पी ली और परामर्श दिया, इस से यह और भी अधिक परिमाण में अन्तर्राष्ट्रीय समस्या बन गई ।

अस्तु, हम ने सदा ही अपने कर्त्तव्यों और दायित्वों को दृष्टि में रखते हुये इस समस्या के अनुसार कार्यवाही की है । और वे कर्त्तव्य और उत्तरदायित्व क्या थे ? सर्वप्रथम : भारत राज्य को किसी भी प्रकार के आक्रमण से बचाया जाय और इस की रक्षा की जाये । हमारे राज्य का प्रमुख उत्तरदायित्व यही है । दूसरा यह कि हम उस प्रतिज्ञा को पालें जो हम ने जम्मू तथा काश्मीर राज्य के साथ की थी । चुनांचि वह प्रतिज्ञा अपने में दोहरी थी । उस का एक पक्ष यह था कि काश्मीर के लोगों को आक्रान्ताओं के लूट-मार, आग, अत्याचार और भयंकर आक्रमण से बचाया जाये, और उस प्रतिज्ञा का जो दूसरा पक्ष था, वह यह था कि अन्ततः वे ही स्वयं अपने भविष्य का निर्णय कर लें । ये ही थे हमारे दो कर्तव्य । तीसरी बात यह थी कि हमने संयुक्त राष्ट्र संघ को कई बातों का निश्चय दिलाया था, और हमें उन का पालन करना था । और चौथी बात यह थी हमें शान्तिपूर्ण वातावरण स्थापित करने के लिये काम करना था । हम ने किसी भी व्यक्ति या राष्ट्र के साथ इन बातों की प्रतिज्ञा नहीं की थी किन्तु हम ने आरम्भ से ही इसी नीति का अनुसरण करने का प्रयत्न किया क्यों कि परिस्थिति को देख कर ही हमें शान्ति के आदर्शों को बनाये रखने के लिये इस प्रकार की नीति का अनुसरण करना चाहिये । और इन सब बातों के अतिरिक्त भी इस प्रकार का व्यवहार बहुत ही आवश्यक था क्योंकि इस संसार में, जैसा मैं सदन से उल्लेख भी कर चुका हूं, हम मानों एक ढालू चट्टान के किनारे खड़े हैं, और हमें बहुत सावधानी से कदम बढ़ा देना है, ताकि कहीं ऐसा न हो कि सारा संसार इस चट्टान पर से नीचे लुढ़क कर चूर चूर हो जाये ।

इन्हीं चार बड़ी बड़ी बातों को हमें ध्यान में रखना पड़ा और कभी कभी इन का संतुलन रखना बहुत ही कठिन हो जाता था । कभी कभी ऐसा लगता था कि ये चारों बातें चार भिन्न दिशाओं की ओर हमें खींचे लिये जा रही हैं । कितना ही सुन्दर काम होता यदि ये चारों बातें हमें एक ही दिशा में और एक ही निष्कर्ष पर पहुंचातीं । किन्तु जब इस प्रकार के विचार भिन्नदिशोन्मुखी हों तो हम अपने कर्तव्यों और दायित्वों के पालन के लिये एक ही दिशा में नहीं जा सकते बल्कि हमारे प्रयत्न बिखर जाते हैं । इस के बाद कठिनाइयां पेश होने लग जाती हैं । अस्तु हम ने इन कठिनाइयों का सामना किया है, और कभी कभी हमें इस बात का निश्चय करने में कि क्या किया जाना चाहिये और क्या नहीं किया जाना चाहिये बहुत सी कठिनाइयों का

सामना करना पड़ा है । अतः मैं यही चाहूंगा कि सदन इस स्थिति में इन अति महत्वपूर्ण आश्वासनों, प्रतिज्ञाओं और कारणों का सन्तुलन करते हुए इस समस्या पर विचार करे ।

इन विगत वर्षों में मैंने बार बार सदन के समक्ष स्थिति को प्रस्तुत किया और सदन का समर्थन प्राप्त किया, चुनांचि सदन के समर्थन से ही हम इस नीति का अनुसरण कर सके हैं । मेरा विश्वास है कि कम से कम काश्मीर के सम्बन्ध में हम ने जो नीति अपनाई उसे इस देश के लोगों ने स्वीकार किया है । और लोगों की वह स्वीकृति हमें समय समय पर इस सदन ने या इस से पहले के सदन ने दे दी । हमें इस देश के असंख्य लोगों, मित्रों और समालोचकों से परामर्श प्राप्त हुए हैं और सदा ही उन का स्वागत किया है यद्यपि उन में से कई एक हमें ठीक नहीं जचे । अन्य देशों के असंख्य लोगों ने भी हमारे पास परामर्श भेज दिये हैं । और उन के परामर्श यदि सौहार्दपूर्ण हों, तो हम उन का स्वागत करते हैं । हां, यदि सौहार्दहीन अथवा त्रास देने वाले व्यक्ति हमें इस प्रकार के परामर्श दें तो हम उन का स्वागत नहीं करते । तो हम इस तरह विदेशों के मैत्रीपूर्ण सुझावों का स्वागत करते हैं, और त्रास देने वाले व्यक्तियों के परामर्श को रद्द कर देते हैं— यही हमारी नीति रही है । आज से चार वर्ष और आठ मास पूर्व हमने यह मामला संयुक्त राष्ट्र संघ के समक्ष इस विश्वास से प्रस्तुत किया कि इस प्रकार हम शान्ति के आन्दोलन की सहायता कर सकें और शान्तिपूर्ण वातावरण में काश्मीर की समस्या को आपसी समझौते से सुलझा सकें, किन्तु संयुक्त राष्ट्र संघ और उन की विभिन्न संस्थाओं के अनेक प्रयत्नों के बावजूद भी अभी हम इस समस्या को सुलझा नहीं सके हैं । मैं किसी को अपराधी नहीं ठहराना चाहता और मैं इस समय, निश्चय ही वही बात दोहराऊंगा जो मैं ने पिछली बार डा० फ्रैंक ग्राहम की प्रशंसा में इस सदन मे बताई थी जिन्होंने कि शान्तिपूर्ण ढंग से इस मामले को निपटाने के लिये बहुत अधिक शान्ति और धैर्य से काम लिया है, और जहां तक हमारा प्रश्न है हम अन्त तक डा० ग्राहम की सहायता करते रहेंगे क्योंकि उन्होंने शान्तिपूर्ण ढंग से निपटारा करने का निश्चय किया है, और इस के लिये धैर्यपूर्ण प्रयत्न किये भी जाने चाहियें, हम भले ही इस रास्ते पर चलते चलते थक गये हों, फिर भी हम शान्तिपूर्ण व्यवस्था के लिये प्रयत्न करते रहेंगे । कदाचित्, हमारे देश में इस समस्या से हमारे कई सहयोगियों को थकावट हुई है : मैं उन की थकावट का अनुभव भी कर सकता हूं, किन्तु यह तो निश्चित है कि उन की थकावट इतनी अधिक नहीं जितनी हम लोगों की है जिन्हें दिन प्रति दिन सप्ताह प्रति सप्ताह और मास प्रति मास इस का बोझ उठाना पड़ा है । भले ही भूल से हमें कभी कभी यह थकावट महसूस हो रही हो किन्तु हमें कभी भी जल्दी या भावावेश में कोई काम नहीं करना चाहिये क्योंकि बिगड़ कर या उकता कर जो कोई भी कार्य होता है वह एक व्यक्ति को हानि पहुंचाता है और अन्ततः एक राष्ट्र के लिये बहुत ही हानिकारक बन जाता है । यही कारण है कि हम ने अपने आप को काबू में रखा, और जब भी पाकिस्तानी सीमा के उस पार से हमें युद्ध की चुनौती और धमकी भरा शोर-गुल सुनने को मिला हमने अपने आप पर बहुत ही काबू किया है । हम सभी नियंत्रण में रहे, और मुझे यह कहने में प्रसन्नता हो रही है कि मोटे तौर पर हमारे देशवासियों और हमारे समाचार पत्रों ने अपने आप को काबू में रखा । तो हम इस तरह काम में आगे बढ़ते गये और मैं उन व्यक्तियों की बातों को समझता हूं और उन से सहानुभूति रखता हूं जिन्होंने कभी कभी यह अनुभव किया कि हमें कुछ इस प्रकार का रवैया अपनाना चाहिये जो न्यूनाधिक रूप में प्रतिबन्धित हो । मेरा तब

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

भी यही विश्वास था और आज कल भी यही विश्वास और निश्चय है—जो आप में से कोई भी व्यक्ति समझ सकता है—कि यदि हमने और किसी प्रकार से काम की नीति अपनाई होती तो वह कितनी ही गलत सिद्ध होती । मैं इधर उधर की छोटी छोटी बातों का जिक्र नहीं कर रहा । बल्कि इस नीति के विशाल रुझाव के सम्बन्ध में बता रहा हूं जिस का हम ने अनुसरण किया । पहले की तरह अब भी हमें इन चार कर्त्तव्यों का ध्यान में रखना है ।

संयुक्त राष्ट्र संघ के समक्ष काश्मीर समस्या को प्रस्तुत करते समय भी हम ने यही क्रम रखा है । हमारे कई मित्रों ने हमें यह सुझाव दिया है कि हम संयुक्त राष्ट्र संघ से यह मामला वापस ले लें । मुझे इस सम्बन्ध कोई भी निश्चय नहीं कि क्या उन्होंने इस विषय का अध्ययन किया है अथवा कभी इस बात पर सोचा भी है कि इस या अन्य किसी मामले को वहां से किस तरह वापिस लिया जा सकता है जबकि स्वयं अन्तर्ग्रस्त दल इस मामले को वहां से वापिस नहीं लेना चाहता हो, और यह भी हमें मालूम नहीं कि क्या वह दल इस मामले को वापिस भी लेना चाहता है या नहीं । संयुक्त राष्ट्र संघ ने इस विषय पर तभी विचार करना आरम्भ किया जब हम ने उन से कहा । ठीक है, किन्तु यदि हम राष्ट्र संघ के समक्ष यह मामला नहीं ले जाते तब और कोई राष्ट्र ने इसे उन के समक्ष प्रस्तुत किया होता, और बात भी ऐसी है कि कोई भी दल इस मामले को उनके समक्ष ले जा सकता है । इस लिये यह मामला अभी उन के विचाराधीन है । और यदि हम ने यह कहा होता कि हम संयुक्त राष्ट्र संघ से इसे वापिस ले रहे हैं तो उस से हमारी अशान्ति और धैर्य्यहीनता दीख पड़ती, और इस प्रकार का कोई भी लाभ नहीं होता जैसा कि लोग इस के सम्बन्ध में सोच रहे हैं । अतः एव इस मामले की वापिस ले आने का प्रश्न पैदा नहीं होता, हां, तब ही ऐसा हो सकता है यदि यह सदन यह इच्छा प्रकट करे कि हम भारत सरकार के मंत्री तथा भारतीय संघ संयुक्त राष्ट्र संघ से मामला वापिस ले रहे हैं, और इस के सभी परिणाम भुगतने को तैयार हैं । मैं समझता हूं कि यह एक ऐसी बात है जो न तो सदन चाहता है और न मैं ही चाहता हूं ।

मैंने कभी कभी विनम्रतापूर्वक राष्ट्र संघ की नई प्रगतियों की समीक्षा करने का साहस भी किया, क्योंकि मुझे ऐसा लगा कि उन की प्रगति उनके संधि-पत्र अथवा घोषणापत्र तथा विगत इतिहास और कार्यप्रवृत्ति के अनुकूल नहीं है । इन सब बातों के बावजूद भी मेरा यही विश्वास रहा है कि इतनी सारी त्रुटियां इतने सारे भ्रष्टाचार जिन्हें कि मैं ठीक नहीं समझता होते हुए भी आज के संसार की बनावट में संयुक्त राष्ट्र संघ ही एक बुनियादी संस्था है और जिस की अनुपस्थिति में सारे संसार में एक दुखान्त नाटक की रचना हो जाती । अतएव, मैं नहीं चाहता कि हमारे इस देश में कोई भी ऐसी बात हो जिस से किसी भी विश्व संस्था के क्रमिक विकास पर कोई बुरा प्रभाव पड़े । हो सकता है कि हम में से बहुत सारे व्यक्तियों को अपने जीवन काल में ही वास्तविक विश्व संस्था के दर्शन न हों, किन्तु जब तक उस प्रकार की आदर्श विश्व संस्था को जन्म न मिले तब तक हम संसार के सम्बन्ध में कोई भी आशा प्रगट नहीं कर सकते क्योंकि अन्यथा बहुत बड़े पैमाने पर विश्व का संघर्ष होगा । अतः एव, सदन से मेरा यह निवेदन है कि वह एक गलत कदम होगा कि ऐसा कोई भी काम कर लिया जाये जिस से किसी ऐसी विश्व संस्था की नींव कमजोर हो जाये, यद्यपि हम उस की नीति

से सहमत न हों, और उस की समीक्षा करते हों, जैसा हम कर भी चुके हैं। ये ही और कुछ अन्य कारण हैं जिन से मैं यह समझ नहीं पाता कि लोग संयुक्त राष्ट्र संघ से काश्मीर के मामले को क्यों वापिस लेना चाहते हैं, और क्यों इतना शोर कर रहे हैं। यह ऐसी बात नहीं है कि किसी मामले को अमुक न्यायालय से उठा कर और किसी न्यायालय में पहुंचाया जा रहा है। किसी न्यायालय के नाते राष्ट्र संघ के समक्ष यह मामला प्रस्तुत नहीं किया गया, अपितु हमने विश्व के राष्ट्रों के समक्ष यह मामला रखा, भले ही वे राष्ट्र संयुक्त अथवा असंयुक्त हों, और भले ही उन की संस्था एक न्यायालय के रूप में हो अथवा नहीं हो। काश्मीर की समस्या एक अन्तर्राष्ट्रीय समस्या है। यह मामला लाखों व्यक्तियों के मस्तिष्क में घूम रहा है। बताइये कि आप कानूनी वापसी अथवा किसी अन्य तरीके से किस तरह इस मामले को लाखों लोगों के मस्तिष्क से बाहर निकाल सकते हैं? तो वापसी का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता। हमें सारे विश्व का सामना करना है; अपने देशवासियों, यथार्थों और तथ्यों का सामना करना है और उन को सुलझाना है।

और भी सुनिये: कई मित्रों की यह कल्पना है कि शस्त्र-बल के प्रयोग से ही इस समस्या को आसानी से सुलझाया जा सकता है—वे कहते हैं कि हम अपनी सेनायें भेज दें। मेरा यह निवेदन है कि संसार के किसी भी मामले को—चाहे वह काश्मीर का हो या और किसी राष्ट्र का—इस तरह से नहीं सुलझाया जा सकता: मैं जितनी देर और जीवित रहूं, और जितना भी अनुभव प्राप्त करूं उतना ही मुझे इस बात का विश्वास बढ़ जायेगा कि युद्ध से किसी भी समस्या को सुलझाया नहीं जा सकता। मुझे अपने इस दुर्भाग्य पर भी बड़ा दुःख हो रहा है कि हमें वायु जल तथा भूमि की सेनाओं के सम्भरण और शस्त्रास्त्र के क्रम पर धन व्यय करना पड़ रहा है, और ऐसा करना भी आवश्यक है क्योंकि आधुनिक रचना के इस संसार में प्रत्येक व्यक्ति को पहले से ही सावधान रहना पड़ता है। प्रत्येक उत्तरदायी व्यक्ति को इन बातों में सावधान रहना चाहिये, और यदि हम भी इन बातों में सावधान रहें, तो हमें पर्याप्त रूप से सावधान रहना पड़ेगा और एक अच्छी भू-सेना, जल-सेना और वायु-सेना को रखना पड़ेगा। यह एक तथ्य है। किन्तु मैं इस विचार को कतई पसन्द नहीं करता कि हम अपने जवानों को युद्ध करायें या युद्ध लड़वायें। हां तभी उन्हें युद्ध लड़ना पड़ेगा जब परिस्थितियों से हम मजबूर हो जायेंगे जैसा कि अक्तूबर, १९४७ की शाम को मैं मजबूर हुआ था जब बहुत सोच-विचार तथा परामर्श करने के बाद—आज्ञा हो तो यह भी बता दूं कि राष्ट्रपिता गांधी से नम्रतापूर्वक परामर्श करने के बाद ही—मैं इस प्रकार के निष्कर्ष पर पहुंचा था।

तो हम ने इसी प्रकार काम चलाया। यद्यपि हमारे मित्र भारत राज्य की रक्षा का जिक्र करते हुए यह बताने लगें: भारत राज्य के एक भाग पर आक्रमण हुआ है: इस पर शत्रु ने अपना अधिकार जमा रखा है; और अब आप ने इस के बारे में क्या सोच रखा है? क्या आप ने भारत राज्य की रक्षा की? आप इस रक्षा कार्य में असफल रहे हैं। उन मित्रों का यह तर्क बिल्कुल उचित है, और यह समीक्षा भी ठीक है: हमारा यह कर्तव्य था, और अब भी यही कर्तव्य है कि हम भारत राज्य के किसी भी भाग से शत्रुओं को बाहर ढकेल कर भारत के उस अंग की रक्षा करें। इन ही बातों में भिन्न कर्तव्यों और उत्तरदायित्वों के बीच एक प्रकार का संघर्ष पैदा हो जाता है। सदन को मालूम है कि हम ने बिल्कुल शुरू में यह निश्चय किया था कि हम इस प्रकार की मतगणना से सहमत हैं जिस में जम्मू व काश्मीर राज्य के सभी व्यक्ति भाग लेंगे। और यह कुछ

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

विचित्र सी बात थी कि इस प्रकार के निश्चय के बाद कि इस युद्ध को जारी किया जाना चाहिये था, क्योंकि प्रारम्भ से ही—यानी १९४७ के अक्तूबर के अन्तिम सप्ताह से १९४८ के दिसम्बर के अंतिम सप्ताह तक—लग भग १४–१५ महीनों तक युद्ध होता रहा : युद्ध के जारी रहने के कारण १९४८ के अन्तिम दिनों या १९४९ के प्रारम्भ में हमें ही इस बात का निश्चय करना था कि क्या हम किसी भी कीमत पर बिल्कुल अंत तक युद्ध जारी रखें और अथवा खोया हुआ राज्य-भाग वापिस लें चाहे हमें कितना भी समय लग जाये या सभी सैनिक कार्य रोक लें, और किसी अन्य शान्ति ढ़ग से काम लें। तो मैं यह कहना चाहता हूं कि विशेष परिस्थितियों में पड़ कर हम ने यह ठीक निश्चय किया कि हम सभी प्रकार के सैनिक कार्य रोक कर अन्य तरीकों से काम लें। किन्तु उन अन्य तरीकों से अभी हमारी समस्या सुलझ नहीं सकी है। इन सब बातों के बावजूद भी मैं यह कहूंगा कि पिछले कुछ वर्षों से जम्मू तथा काश्मीर राज्य की जैसी भयावह स्थिति को भभक उठने से रोक लेना भी अपने में कोई कम सफलता नहीं है। संसार के अन्य देशों और राष्ट्रों में भी बवण्डर उठे, और उन्हों ने जितना ही उन को दबाने का प्रयत्न किया उतना ही वह और भी भड़क उठे, और यह भी देखिये कि ऐसी स्थिति में यदि आप युद्ध की ठानना चाहें तो इस स्थिति से बच निकलना कितना ही कठिन होगा। मैं नम्रतापूर्वक आप से यह निवेदन करूं कि हस ने साहस और बुद्धिमत्ता से अपने आप को समय से बिल्कुल पहले ही जब कि बाद में हमें शान्ति, धैर्य्य तथा बुद्धिमत्ता से सोचने का समय नहीं मिलता, उस अन्तहीन युद्ध की दल दल से बाहर निकाला। रहा यह कि उस का क्या परिणाम रहा : सत्य यह है कि परिणाम निकल चुका है क्योंकि विगत लग भग ३/$\frac{१}{२}$ वर्षों से हम कोई भी युद्ध नहीं लड़ रहे हैं। भले ही यह बात पूरी तरह से हमारी आशाओं के अनुकूल न हो किन्तु मैं समझता हूं कि यह कोई बुरा परिणाम नहीं रहा है।

इस के पश्चात् हम ने यह घोषणा की कि काश्मीर के सम्बन्ध में और अग्रेतर आक्रमण —मैं इसीलिये अग्रेतर कह रहा हूं कि आक्रमण की चुनौती जारी रही थी—अथवा सैनिक कार्य, यदि उस ओर के लोगों ने ऐसा कदम उठाया होता, से न केवल काश्मीर में अपितु अन्य जगहों में युद्ध छिड़ जाता। स्पष्ट है कि इस बात के सम्बन्ध में भी हम ने बहुत ही गंभीर विचार विमर्श के बाद निश्चय किया। अपनी बातों के परिणाम को पूरी तरह से जानते हुए और उन का संतुलन करते हुए हमारा निष्कर्ष बहुत ही गम्भीर था—और हम ने जो कुछ भी कहा वह तथ्य था, उस में आतंक या खतरे की कोई भी बात नहीं थी। चुनांचि हम ने उस समय यही कहा कि काश्मीर पर कोई भी आक्रमण नहीं हो सकता, और यदि होगा भी तो वह भारत पर आक्रमण समझा जायेगा। मैं समझता हूं कि हम ने स्थिति का स्पष्टीकरण किया, और काश्मीर में फिर से अक्तूबर, १९४७ के दंगों को दोहराने की संभावना समाप्त की। तो इस प्रकार की स्थिति रही है।

तो अब, इन सब घटनाओं से हमें दो तीन बातें निष्कर्ष के रूप में मिल जाती हैं। पहली बात यह है कि सदन के किये गये निश्चय के अनुसार हम संयुक्त राष्ट्र संघ में उन के साथ यथापूर्व नीति बरत लेंगे। संयुक्त राष्ट्र संघ में हम ने जो कोई भी कदम उठाया वह शान्तिपूर्ण व्यवस्था के लिये ही उठाया। हम भविष्य में भी शान्ति स्थापित करने के लिये पूरे प्रयत्न करते रहेंगे, और अपने कर्त्तव्यों और उत्तरदायित्वों को बराबर पालते रहेंगे। सारी स्थिति आप के सामने है : और हमारी यही

नीति है कि हम काश्मीर वासियों अथवा सारे भारत के साथ की गई प्रतिज्ञाओं का पूरा पूरा सम्मान करेंगे; और इस दिशा में इसी तरह कदम बढ़ाते रहेंगे ।

सदन को ज्ञात है कि हम ने भारत आये हुए संयुक्त राष्ट्र संघ और संयुक्त राष्ट्र संघ आयोग के कई संकल्पों को स्वीकृत किया। हम चूंकि एक शान्तिपूर्ण निपटारा चाहते थे, और इस बात के इच्छुक थे कि कोई निर्णय हो जाये, अतः हमने उन संकल्पों को स्वीकृत किया; ऐसी कोई भी बात नहीं थी कि हम उन सभी संकल्पों को चाहते थे, किन्तु उन संकल्पों को स्वीकार करते समय हम ने इस बात को पूर्णतया स्पष्ट किया कि हम अपनी प्रतिज्ञाओं का उल्लंघन नहीं करेंगे, न तो उन उत्तरदायित्वों को ही छोड़ देंगे जो हम ने संभाल रखे हैं । इस के बहुत समय बाद सुरक्षा परिषद् ने एक और संकल्प पारित किया जिस से हम पर मध्यस्थ-निर्णय लादा गया । उन की इस बात को मान लेना तो एक जुदा बात थी किन्तु अपने कर्त्तव्यों, प्रतिज्ञाओं उत्तरदायित्वों और निश्चयों को छोड़ना एक गलत बात थी अतः हम ने उन का वह संकल्प अस्वीकृत किया; और यही कारण है कि हम यह मामला और किसी व्यक्ति के हाथ में सौंप नहीं सकते थे, भले ही वह कोई भी व्यक्ति हो । हम इस प्रकार कभी कर भी नहीं सकते थे । हमारे लिये यह भी एक भिन्न बात थी कि हम जम्मू तथा काश्मीर राज्य के ४० लाख लोगों का विश्वास किसी मध्यस्थ के निर्णय पर छोड़ देते । यह एक बड़ा राजनीतिक प्रश्न था, और इस प्रकार से कभी राजनीतिक प्रश्न विदेशों के मध्यस्थों को इस तरह नहीं सौंपे जाते हैं । यही कारण है कि हमें संयुक्त राष्ट्र संघ का यह संकल्प रद्द करना पड़ा । और अभी भी हम उस को अस्वीकृत हुआ समझते हैं; और हम किसी भी ऐसी बात से जो हमें इस बीच मिले, सहमत नहीं हो सकते, न तो ऐसी बात को मान सकते हैं जो हमें अपनी प्रतिज्ञाओं अथवा हमारे द्वारा दिये गये आश्वासनों को पूरा करने से रोक रही हो ।

इन परिस्थितियों को दृष्टि में रखते हुए हम शान्ति पूर्ण व्यवस्था करने का पूरा पूरा प्रयत्न करेंगे तो हमारे द्वारा दिये गये आश्वासनों तथा की गई प्रतिज्ञाओं में एक प्रतिज्ञा जो हमारी नीति के परिणामस्वरूप ही हमें करनी पड़ी, इस प्रकार थी कि जम्मू तथा काश्मीर राज्य के लोग स्वयं अपने भविष्य का निर्णय करेंगे । इस सिलसिले में मैं काश्मीर के भारत से मिल जाने के सम्बन्ध में स्पष्टीकरण करना चाहूंगा क्यों कि इस बात में बहुत सी गलतफहमी हुई है । उस दिन मैं ने सदन में बताया था कि यह मेल विधि तथा तथ्य की दृष्टि में बिल्कुल पूर्ण है । ऐसा दीख रहा है कि विदेशों के कई लोग और कई समाचारपत्र यह सोचते हैं कि पिछले सप्ताह, पखवाड़े अथवा तीन सप्ताहों में जो कुछ भी घटनायें हुईं उस से मेरे विचार के अनुकूल यह प्रवेश पूरा हो चुका । मैं ने यही बतलाया था कि अक्तूबर १९४७ में ही यह प्रवेश विधि तथा तथ्य की दृष्टि में पूर्ण हो चुका था । यह तो एक मानी हुई बात है और इस में किसी भी तर्क की आवश्यकता नहीं क्योंकि भारत के प्रत्येक राज्य का प्रवेश जुलाई, अगस्त, सितम्बर, अथवा उसी वर्ष के किसी बाद के महीने में इन ही शर्तों पर पूरा हो चुका था । तीन बुनियादी बातों में इन राज्यों के प्रवेश हुए : अर्थात् वैदेशिक कार्य, संचरण-सम्पर्क । तथा रक्षा में वे सभी राज्य भारत से मिल गये । क्या कोई भी व्यक्ति यह कह सकता है कि १९४७ के अगस्त, सितम्बर, अक्तूबर या नवम्बर में किसी भी राज्य का भारत में प्रवेश इसलिये अपूर्ण था क्योंकि वह केवल इन उक्त तीन विषयों के सम्बन्ध में था? कभी नहीं । विधि की दृष्टि में और तथ्य के रूप में वह

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

पूरा प्रवेश था । तो इसी तरह विधि तथा तथ्य की दृष्टि से जम्मू तथा काश्मीर राज्य का प्रवेश भी यदि मुझे उस दिनांक का ठीक स्मरण हो रहा हो, २६ या २७ अक्तूबर को ही हुआ था ।

इस में सन्देह या अयथार्थता की कोई भी गुंजायश नहीं है । मुझे इस बात का आश्चर्य हो रहा है कि यहां सदन में अथवा संसार के किसी भी कोने में बैठा हुआ कोई व्यक्ति इस बात को गलत बताता है । मैं सदन से यही कह रहा था कि जब पहला संयुक्त राष्ट्र संघ आयोग अपने कानूनी परामर्शदाताओं और अन्य व्यक्तियों को ले कर यहां आया था उस समय उसे इस प्रकार कहने का अधिकार था, बल्कि उन्हें इस की जांच के लिये बिठाया गया था । किन्तु उन्हें यह मामला बिलकुल स्पष्ट दिखाई दिया और उन के कानूनी परामर्शदाताओं ने सब से पहले यही बतलाया कि इस प्रवेश की कानूनी पृष्ठभूमि दृढ़ है और इसे झुठलाया नहीं जा सकता । तो एक ओर यह प्रवेश विधि तथा तथ्य की दृष्टि से पूरा है और दूसरी ओर काश्मीरवासियों के साथ हम ने प्रतिज्ञा भी की है——मैं यहां तक कहूंगा कि हम ने विश्व के समक्ष उन से यह प्रतिज्ञा की है——कि काश्मीरवासी अपनी इच्छा से इस प्रवेश के विषय को फिर से दृढ़ बना सकते हैं अथवा इसे रद्द कर सकते हैं जैसा भी वे चाहते हों । हम लोगों को उन की इच्छा के विरुद्ध, शस्त्रास्त्र की सहायता से अपने साथ मिलाना नहीं चाहते, और इसी तरह यदि जम्मू तथा काश्मीर राज्य के रहने वाले कोई अलग रास्ता ले कर हम से दूर रहना चाहते हों तो उस समय हम भी किनारा कर लेंगे । हम इस तरह के अनिच्छापूर्वक मेल अथवा जोड़ नहीं चाहते । मेरी यह आशा है कि यह विशाल भारतीय गणतंत्र भारतीय राज्यों का एक स्वतंत्र, स्वेच्छापूर्ण, मैत्रीपूर्ण और सौहार्दपूर्ण संघ है । मेरा यह भी विश्वास है कि जम्मू व काश्मीर के लोग न केवल हमारे पास यों ही आये, अपितु उन की प्रार्थना पर ही हम ने उन्हें अपने इस बड़े राज्य-परिवार में प्रविष्ट किया और मैं यह भी समझता हूं कि अन्य राज्यों की भांति वह राज्य भी हमारे साथ मैत्रीपूर्ण भाव बनाये हुए है । मेरा भी यह विश्वास है कि उन्होंने बार बार इस तथ्य को सिद्ध किया है और लग भग एक वर्ष पूर्व इस संविधान सभा के निर्वाचन में भारत के साथ मैत्री और एकता का भाव प्रदर्शित किया है । व्यक्तिगत रूप से मुझे इस बात का भी विश्वास प्राप्त है कि यदि हमें किसी भी समय उन के भाव जानने के लिये और किसी प्रणाली का प्रयोग करना पड़े तो उस समय भी इसी तरीके से इस बात का निश्चय कर लेंगे । खैर, यह तो मेरा निजी मत है; हो सकता है कि आप का और; सारे सदन का भी यही मत हो, किन्तु तथ्य यह है कि हम ने उन के और सारे विश्व के समक्ष इस बात की घोषणा की कि हम उन्हें स्वयं अपना निर्णय करने देंगे और बाद में उस निर्णय को स्वीकार करेंगे । अतएव हमें उस प्रतिज्ञा का सम्मान करना चाहिये । इन आश्वासनों और प्रतिज्ञाओं की सीमा में रह कर हम उसी नीति का अनुसरण करते रहेंगे जो हम आज तक चलाते रहे हैं, और मेरा यह भी निवेदन है कि इन आश्वासनों, प्रतिज्ञाओं और नीतियों के अनुसार ही हम थोड़ी देर पहले काश्मीर राज्य के उन प्रतिनिधियों से मिले जो न केवल वहां की सरकार के प्रतिनिधि हैं, अपितु काश्मीर के लोकप्रिय नेता हैं । हम उन से मिले और हम ने उन के साथ इन सभी मामलों पर बहस की । हम ने किसी सौदाबाज़ी या दलबन्दी संघर्ष की भावना से उन से विचार-विमर्श नहीं किया बल्कि इस विचार से उन के साथ बात चीत की कि इन उलझी समस्याओं और गुत्थियों को सुलझाया

जा सके, और कोई ऐसा रास्ता निकल आये जिस पर चल कर हम और वे, दोनों अपनी अपनी प्रतिज्ञाओं और नीतियों को पूरी तरह से निभा सकें । तो हम ने मित्रता के नाते उन से इस बात पर विचार-विमर्श किया, और जिन जिन बातों में हम सहमत हुए उन्हें मैं पिछले सत्र में सदन के समक्ष रख चुका हूं । यह भी स्पष्ट है कि उन करारों से यह सारा चित्र पूरा नहीं हो पाता । यों तो बहुत कुछ किया जाना बाकी है, और बहुत बातों के सम्बन्ध में विचार करना बाकी है किन्तु दो तीन तथ्य सभी के समक्ष हैं । सर्वप्रथम बात यह है कि वर्तमान स्थिति के अनुसार हमें जम्मू त काश्मीर राज्य को अन्य राज्यों से भिन्न मान कर चलना है । यह बहुत ही आवश्यक है और इस प्रकार का सोच-विचार भी अनिवार्य है । आप को कदाचित् विगत चार पांच वर्षों का इतिहास याद होगा कि हम ने कौन कौन से आश्वासन दिये थे, और आप इस तथ्य को भी जानते होंगे कि काश्मीर की समस्या राष्ट्रीय समस्या न रह कर एक अन्तर्राष्ट्रीय समस्या बन चुकी है । अतः हमें इस समस्या को अंशतः किसी पृथक आधार पर सुलझाना है । उस का यह अभिप्राय नहीं कि उन्हें विशेष अधिकार या श्रेय दिया जायेगा बल्कि उन्हें आंतरिक स्वायत्तता के कुछ अधिक साधन प्राप्त होंगे । निश्चय ही इस का यही अर्थ है । हो सकता है कि यह समस्या एक गतिशील और विकासशील स्थिति में हो । इस में धीरे धीरे और परिवर्तन किये जा सकते हैं, किन्तु वर्तमान परिस्थितियों में हमारे लिये यह अच्छा नहीं रहेगा कि हम उन पर किसी भी प्रकार का मानसिक दबाव डालें या उन्हें मजबूर करें । उस से हमें अपने उद्देश्य में सफलता नहीं मिलेगी, और हम आलोचकों के हाथ में कठपुतली बन जायेंगे ।

तो हम ने यही पद्धति अपनाई, और मैत्रीपूर्ण बहस की । पूरी स्वतंत्रता में हम उन कई एक बातों में सहमत हुए जिन्हें मैं सदन के समक्ष रख चुका हूं । और अब मेरा यह विश्वास है कि आज के इस वाद विवाद में सदन इस प्रश्न के सभी पहलुओं पर विचार करेगा और हमें अपना समर्थन प्रदान करेगा ।

१० म० पू०

उपाध्यक्ष महोदय : अब मैं सदन के समक्ष औपचारिक ढंग से प्रस्ताव रखूंगा । प्रस्ताव प्रस्तुत हुआ ।

"That the statement made by the Prime Minister on the 24th July 1952 in regard to Jammu and Kashmir State, be taken into consideration."

"जम्मू तथा काश्मीर राज्य के सम्बन्ध में २४ जुलाई, १९५२ को प्रधान मंत्री द्वारा दिये गये वक्तव्य पर विचार किया जाय ।"

जो माननीय सदस्य अपने संशोधन प्रस्तुत करना चाहते हों, उन्हें मैं बारी बारी से बुला लूंगा ।

श्री वल्लातरास (पुदुकोटै) : मैं प्रस्ताव करता हूं कि :

(१) प्रस्ताव के अन्त में निम्नलिखित शब्द जो इस प्रकार हैं, जोड़े जायें :

"and having considered the same this House is of opinion that the changes proposed and suggested in the statement to be made in the Constitution may be referred for report to a Joint Committee of fifteen Members of both the Houses of Parliament."

"और इस पर विचार करने के बाद इस सदन का यह मत है कि संविधान में प्रस्थापित किये गये तथा सुझाये जाने वाले